P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-7* ISSUE-7* March- 2020
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारत में राज्यों की राजनीति एवं उभरते नवीन आयाम

अजय कुमार
शोधार्थी,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

भारत जैसे विशाल और विविधता वाले देश में लचीलापान और दृढता दोनों ही एक साथ आवश्यक है। आधुनिक गणतन्त्र के जन्म से ही एक मजबूत केन्द्र की आवश्यकता थी। भारतीय संघवाद यानि राज्य व संघ से संबंधित सर्वोच्च व अन्तिम फैसले का अधिकार भारतीय शीर्ष न्यायालय के पास है। केंद्र और राज्यों के बीच सब कुछ सहज नहीं होना एक बार फिर उस पुरानी राजनीतिक बहस की याद दिला रहा है, जब केंद्र और राज्यों के संबंधों को ले कर भारत की राजनीति गरमागरम बहसों से भरी हुई थी। संशोधित नागरिकता कानून के बाद देश में एक ओर जहां सड़कों पर हंगामा मचा हुआ है वहीं देश के अनेक राज्य इस कानून को ले कर अपनी असहमति जता रहे हैं। सरकारिया आयोग का गठन बड़े राजनीतिक दबावों के बाद केंद्र राज्य संबंधों के संतुलन की नीति को स्पष्ट करने के लिए किया गया था।

मुख्य शब्द : राज्य राजनीति, केन्द्र राज्य सम्बन्ध, राज्यों में राजनीति के नये आयाम।

प्रस्तावना

भारत के विभिन्न राज्यों में राजनीति के निर्धारक तत्वों में एक महत्वपूर्ण आयाम राजनीतिक परिदृष्य में दलीय व्यवस्था का स्वरूप है। भारत बहुभाषी, बहुजातीय, बहुसंस्कृति जैसी विविधताओं मे एकता वाला देष है इसलिए यहाँ बहुदलीय व्यवस्था सर्वोपयुक्त होगी। इसी आधार पर बहुदलीय व्यवस्था को ग्रहण किया गया जिसमें दलों को मोटे रूप में चार भागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम राष्ट्रीय राजनीतिक दल, द्वितीय क्षेत्रीय दल तृतीय स्थानीय किन्तु जातीय सांप्रदायिक दल तथा चतुर्थ तदर्थ दल। इस विभाजन के आधार पर वर्तमान में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में 6 राष्ट्रीय दल, 48 क्षेत्रीय दल एवं पंजीकृत एवं गैर मान्यता प्राप्त दलों की संख्या 750 को पार कर गयी है जो इस बात की परिचायक है कि प्रत्येक लोकतांत्रिक राज्यों में दलीय प्रणाली की प्रकृति देष की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों और आवष्यकताओं के अनुरूप होती है, जो राजनीतिक प्रक्रियाओं को जोड़ने एवं सरल बनाने के कार्य करते है।[1]

भारतीय राज्यों राजनीति के नवीन आयाम

भारतीय जनता पार्टी ने हरियाणा में जननायक जनता पार्टी (जजपा) के साथ गठबंधन कर एक बार फिर से सरकार बना ली है, लेकिन महाराष्ट्र में शिवसेना और भाजपा गठबंधन अभी तक सरकार नहीं बना सका है। इसमें शिवसेना की ढाई साल के लिए मुख्यमंत्री पद की मांग रोड़ा बनी हुई है। यह पहला अवसर नहीं है जब किसी राज्य में सरकार बनाने को लेकर गठबंधन के बीच पद और विभागों के लिए सौदेबाजी हो रही है और स्थायी सरकार को लेकर संकट खड़ा हो गया है। भारतीय राजनीति में यदि सबसे बेमेल गठबंधन की बात की जाए तो जम्मू–कश्मीर में 2015 में बनी बीजेपी और पीडीपी की सरकार है। सैद्धांतिक और वैचारिक रूप से धुर विरोधी होते हुए भी दोनो पार्टियों ने मिलकर राज्य में सरकार बनाई। हालांकि धारा 370 जैसे मुद्दे और स्टेट के दर्जे को लेकर दोनों में विरोध हुआ और सरकार धराशायी हो गई। वर्तमान राजनीति में लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा) सुप्रीमो रामविलास पासवान का गठबंधन की राजनीति में नाम सबसे आगे है। सन 2000 में जेडीयू से अलग होने के बाद उन्होंने लोक जनशक्ति पार्टी का गठन किया था। इसके बाद वे एनडीए सरकार में शामिल हो गए। 2002 में गुजरात दंगों के मामले में एनडीए से नाता तोड़ा। 2004 में हुए लोकसभा चुनाव में मनमोहन सरकार में शामिल हुए। 2009 में कांग्रेस से हटे। 2010 में लालू यादव ने राज्यसभा पहुंचाया। 2014 और 2019 में केंद्र की भाजपा सरकार में फिर मंत्री बने।[2]

महाराष्ट्र में चुनाव परिणाम आने के बाद शिवसेना ने अपनी कई सालों पुरानी सहयोगी बीजेपी से गठबंधन तोड़कर एनसीपी और कांग्रेस जैसे विरोधी

दलों से हाथ मिला लिया। इस नए पोस्ट–पोल गठबंधन की वजह से बीजेपी शासित राज्यों में से एक राज्य और कम हो गया। 2019 में अब तक 6 राज्यों में विधानसभा चुनाव हो चुके हैं जबकि 7वें राज्य (झारखंड) में चुनाव हुआ, चुनाव परिणाम बाद कांग्रेस की सरकार बनी और भाजपा सत्ता से बाहर हो गया। 2019 में आंध्र प्रदेश, ओडिशा, सिक्किम, हरियाणा और महाराष्ट्र में चुनाव हुए हैं। 11 अप्रैल को आंध्र प्रदेश में हुए विधानसभा चुनावों में बीजेपी को इस बार एक भी सीट पर जीत नहीं मिली, पिछले विधानसभा चुनावों में बीजेपी ने वहां 4 सीटें जीती थीं। अप्रैल 2019 में कई चरणों में हुए ओडिशा विधानसभा चुनावों में बीजेपी को इस बार 23 सीटें मिलीं। बीजेपी यहां पिछले चुनावों में सिर्फ 10 सीट जीत पाई थी। यानी ओडिशा में बीजेपी को 10 सीटों का फायदा हुआ। 11 अप्रैल को अरुणाचल प्रदेश में हुए विधानसभा चुनावों में बीजेपी को 60 में से 41 सीटों पर जीत मिली। इससे पहले हुए चुनावों में बीजेपी के खाते में सिर्फ 11 सीटें ही आई थीं। इस तरह देखें तो अरुणाचल प्रदेश में बीजेपी को कुल 30 सीटों का फायदा हुआ।

11 अप्रैल को सिक्किम में हुए विधानसभा चुनावों में बीजेपी को एक भी सीट पर जीत नहीं मिली। लेकिन परिणाम के कुछ महीनों बाद कुछ ऐसी घटना घटी कि बीजेपी राज्य की प्रमुख विपक्षी पार्टी बन गई। दरअसल सिक्किम में 25 सालों तक शासन करने वाली सिक्किम डेमोक्रेटिक फ्रंट (एसडीएफ) के 10 विधायक रातोंरात पाला बदलकर बीजेपी में शामिल हो गए थे। 21 अक्टूबर को हरियाणा में हुए विधानसभा चुनावों में बीजेपी को 90 में सिर्फ 40 सीटों पर जीत हासिल हुई। पिछले चुनावों में बीजेपी के पास 47 सीटें आई थीं। हरियाणा में सरकार बनाने के लिए 46 विधायक चाहिए इस वजह से बीजेपी को जननायक जनता पार्टी से गठबंधन करना पड़ा। 21 अक्टूबर को महाराष्ट्र में हुए विधानसभा चुनावों में बीजेपी को 105 सीटों पर जीत मिली। इससे पहले के चुनाव में बीजेपी को कुल 122 सीटों पर जीत मिली थी। यानी चुनावों में बीजेपी को कुल 17 सीटों का नुकसान हुआ।महाराष्ट्र से पहले हिंदी पट्टी के मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ जैसे तीन बड़े राज्य बीजेपी के हाथ से निकल चुके हैं। लेकिन यहां यह भी गौर करने वाली बात है कि मुश्किल से 7 महीने पहले बीजेपी ने लोकसभा चुनाव में जबरदस्त प्रदर्शन करते हुए भारी जीत हासिल की थी। बीजेपी ने लोकसभा की 543 सीटों में से 303 सीटें हासिल की थीं जो कि कुल सीटों का करीब 56 फीसदी है। जब इन आंकड़ों को विधानसभा क्षेत्रों से मिलाया गया तो पता चला कि लोकसभा चुनावों में कुल 4120 विधानसभा सीटों में से 2089 पर बीजेपी पहले नंबर पर थी। यानी लोकसभा चुनाव 2019 में मोदी के नेतृत्व में बीजेपी 51 प्रतिशत विधानसभा सीटों पर जीती।

इंडिया टुडे के डाटा इंटेलीजेंस यूनिट (क्न्) ने लोकसभा चुनाव परिणाम का विधानसभाओं के आधार पर विश्लेषण किया और इसकी तुलना विधानसभाओं में (28 नवंबर 2019 तक के) मौजूदा प्रतिनिधित्व से की। हमने पाया कि बीजेपी केंद्र में तो ताकतवर है, लेकिन राज्य विधानसभाओं में कमजोर पड़ रही है। राज्यों में स्थानीय पार्टियों की पकड़ मजबूत है। हालांकि, जब हमने 2014 से नवंबर 2019 तक विधानसभा चुनावों के आंकड़ों का अध्ययन किया तो सामने आया कि फिलहाल बीजेपी कुल 32 फीसदी विधानसभाओं में सत्ता में है। एक रिपोर्ट में हमने आपको यह भी बताया था कि दिसंबर, 2017 में बीजेपी का शासन देश के 71 फीसदी भूभाग पर था लेकिन नवंबर 2019 में बीजेपी का शासन घटकर 40 प्रतिशत तक सिमट गया। इसके बावजूद भी बीजेपी देश में सबसे बड़ी राजनीतिक पार्टी बनी हुई है।[3]

मार्च 2018 तक बीजेपी की भारत के 21 राज्यों में सरकार थी। कुछ राज्यों में बीजेपी अपने दम पर सरकार में थी और कुछ जगह सहयोगी दलों की मदद से। 2019 में जम्मू–कश्मीर के दो केंद्र शासित प्रदेशों में बँटने से पहले भारत में कुल 28 राज्य थे। महाराष्ट्र में एनसीपी, शिवसेना और कांग्रेस की सरकार बनने के बाद बीजेपी एक और राज्य में सत्ता से बाहर हो गई है। 2018 के विधानसभा चुनावों में मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ में हारने के बाद महाराष्ट्र बीजेपी के लिए ताजा झटका है। किसी एक राजनीतिक पार्टी का देश में इस तादाद में राज्यों की सरकार में होना पहली बार नहीं है। 1993 में भी कांग्रेस देश के 26 में से 16 राज्यों में सरकार में थी। इनमें से 15 राज्यों में कांग्रेस अपने दम पर सत्ता में थी। 2014 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सत्ता में आने से पहले भारतीय जनता पार्टी सात राज्यों में सत्ता संभाल रही थी। मार्च 2018 आते–आते बीजेपी तेजी से बढ़ते हुए 21 राज्यों में सरकार बनाने में सफल रही। यानी चार साल में तिगुना विस्तार। 2015 में जम्मू–कश्मीर में सरकार बनाने के लिए बीजेपी ने पीडीपी से हाथ मिलाया था। इन चुनावों में पीडीपी 28, बीजेपी 25, नेशनल कॉन्फ्रेंस 15 और कांग्रेस 12 सीटें जीत सकी थी। राज्य में कुल 87 विधानसभा सीटें थीं। ये पहली बार था, जब पंजाब को छोड़कर पूरे उत्तर भारत में बीजेपी अकेले या अपने सहयोगी दलों के साथ सरकार में थी। लेकिन बीजेपी का विजयरथ 2018 से रुकना शुरू हुआ, जब कर्नाटक में कांग्रेस गठबंधन ने सरकार बना ली। हालांकि ये सरकार ज्यादा दिन नहीं चली और कुछ वक्त बाद बीजेपी ने फिर से राज्य में सरकार बना ली। महाराष्ट्र के ताजा नतीजों के बाद ये साफ है कि बीजेपी और उसके सहयोगी दलों की राज्यों में पकड़ कम हो रही है।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-7* ISSUE-7* March- 2020
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

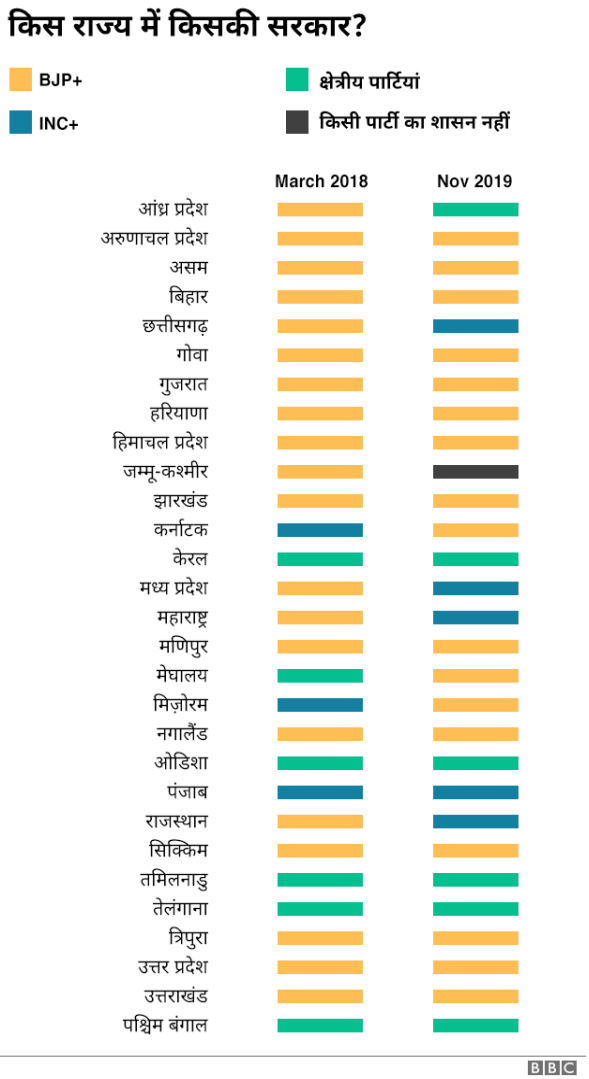

हालांकि एक साल में बीजेपी जिन राज्यों में सत्ता से बाहर हुई है, वो संख्या बहुत ज्यादा नहीं है। लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि बीजेपी देश के बड़े राज्यों महाराष्ट्र, राजस्थान और मध्य प्रदेश में हारी है। ये ऐसे राज्य हैं, जिनमें बीजेपी और उसके सहयोगी दलों की पकड़ मजबूत रही है। इन राज्यों की जनसंख्या भी दूसरे कई राज्यों के मुकाबले काफी ज्यादा है। 2011 जनगणना के आंकड़ों के हिसाब से बात करें तो 2018 में बीजेपी जिन राज्यों में सरकार में थी, वहां की कुल आबादी करीब 84 करोड़ थी। यानी देश की कुल जनसंख्या का 70 फीसदी। हालिया चुनावों में हार के बाद बीजेपी की राज्य सरकारें देश की कुल 47 फीसदी आबादी पर राज कर रही हैं। यानी 2018 से करीब 23 फीसदी की गिरावट।[4]

झारखंड में हेमंत सोरेन की अगुवाई वाले झामुमो, कांग्रेस और राजद के महागठबंधन ने राज्य विधानसभा चुनावों में धमाकेदार जीत दर्ज की है। 81 सदस्यीय विधानसभा में जहां महागठबंधन ने बहुमत से ज्यादा 47 सीटें जीतीं, वहीं सत्तारूढ़ भाजपा को सिर्फ 25 सीटों से ही संतोष करना पड़ा। चुनावों में भाजपा का 65 सीटें जीतने का अभियान ध्वस्त हो गया। इसी के साथ महाराष्ट्र में सत्ता से बाहर होने के बाद अब झारखंड भी भाजपा के हाथ से फिसल गया। एक साल में भाजपा ने पांच राज्यों (राजस्थान, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और अब झारखंड) में सत्ता गंवा दी। झारखंड के बनने के 19 साल के इतिहास में कोई भी सत्तारूढ़ पार्टी सत्ता में वापसी नहीं कर पाई है।[5]

दिल्ली में आम आदमी पार्टी (आप) ने एक बार फिर परचम लहराया है। दिल्ली की 70 विधानसभा सीटों में आम आदमी पार्टी (।उ ।कउप च्ंजल) को 62 सीटें मिली हैं। वहीं, भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) सिर्फ 8 सीटों पर सिमटकर रह गई। दूसरी तरफ कांग्रेस का एक बार फिर सूपड़ा साफ हो गया और वह कोई भी सीट नहीं जीत सकी। दिल्ली में आम आदमी पार्टी की यह हैट्रिक है और उसने दूसरी बार प्रचंड बहुमत के साथ सत्ता में वापसी की है। हालांकि आम आदमी पार्टी को 2015 के मुकाबले में 5 सीटों का नुकसान हुआ है, वहीं भारतीय जनता पार्टी को इतनी सीटों का फायदा हुआ है।[6]

निःसंदेह विधानसभा चुनावों में आम जनता प्रधानमंत्री मोदी की कर्मठ और साहसिक फैसले लेने में सक्षम नेता वाली छवि पर मोहित होती है, लेकिन वह यह भी जानती है कि मुख्यमंत्री की कुर्सी पर तो कोई और ही बैठेगा। दिल्ली में भाजपा का वनवास पांच साल के लिए और बढ़ गया है। उसे दिल्ली के अपने नेताओं की गुटबाजी पर लगाम लगाने के साथ ही इस पर भी ध्यान देना होगा कि उसके अधीन काम करने वाले नगर निगम अपने कामकाज में सुधार करें। देश की राजधानी होने के नाते दिल्ली की शासन व्यवस्था अन्य राज्यों से भिन्न है। कई बार यहां की जनता को यह पता नहीं चलता कि उसकी किस समस्या का समाधान किसे करना है–दिल्ली सरकार को या फिर केंद्र सरकार को? इसका कोई औचित्य नहीं कि दोनों के बीच तालमेल के अभाव में दिल्ली की समस्याओं का समाधान न हो। यदि आम आदमी पार्टी सरकार अपने कामकाज को और बेहतर करना चाहती है तो फिर उसकी कोशिश यह होनी चाहिए कि दिल्ली के नगर निगम उसके अधीन आएं।[7]

वर्ष 2014 के लोकसभा चुनावों के बाद भाजपा और प्रधानमंत्री ने राज्यों के मुखियाओं को खुली छूट दी हुई थी। माना जा रहा है कि प्रधानमंत्री उत्तराखण्ड के बारे में भी काफी निराश इसलिए हैं, क्योंकि उत्तराखण्ड की ओर से समीक्षा के दौरान ओडीएफ जैसी केन्द्रीय योजनाओं के ऐसे आंकड़े पेश किए गए जो कि बाद में जांच करने पर फर्जी पाए गए। कई राज्यों में कलह के बावजूद मुख्यमंत्री नहीं बदले गए, जिसका नतीजा राज्यों के विधानसभा चुनावों में हार के रूप में सामने आया। लेकिन अब शायद ही पार्टी अपने मुख्यमंत्रियों की अलोकप्रियता का खामियाजा और अधिक झेलेगी। इस तरह भाजपा का राज्यसभा में स्पष्ट बहुमत हासिल करने का सपना भी सपना ही रह जाएगा।

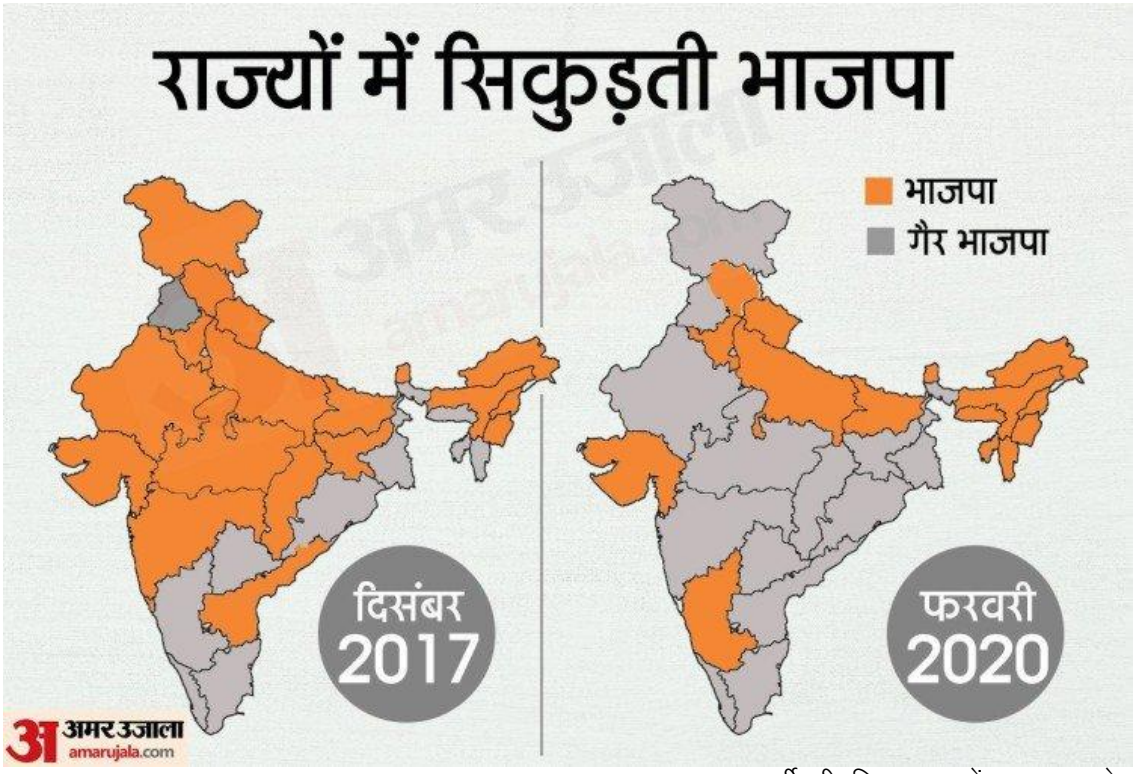

वर्तमान में अकेला बड़ा राज्य उत्तर प्रदेश भाजपा के हाथ में है और कर्नाटक में बड़ी मुश्किल से सत्ता वापस लौटी है। हरियाणा में सत्ता बचाने के लिए दुष्यन्त चौटाला की जननायक जनता पार्टी की बैसाखी का सहारा लेना पड़ा है। बिहार, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड और सिक्किम में दूसरे दलों के मुख्यमंत्रियों की छत्रछाया में भाजपा की राजनीति चल रही है, इसलिए आने वाला समय भाजपा के लिए काफी चुनौतियों भरा हो सकता है। आने वाले समय में असम, पश्चिम बंगाल और बिहार विधानसभाओं के चुनाव होने हैं। दिल्ली में अरविन्द केजरीवाल पर भाजपा के राष्ट्रवाद, सीएए, तीन तलाक और धारा 370 जैसे भावनात्मक हथियार वूमरैंग कर गए। इन्हीं हथियारों को अब तक ममता बनर्जी पर भी अपनाया जा रहा था। इन परम्परागत आग्नेयास्त्रों के विफल होने पर ममता बनर्जी के लिए भाजपा को नए साजो–सामान की जरूरत होगी। असम में एनआरसी और सीएए के बवाल के कारण सत्ता बचाना आसान नहीं रह गया है, जबकि बिहार में नितीश कुमार का कोई भरोसा नहीं। हवा का रुख देख कर वह फिर अपने भतीजे से हाथ मिला सकते हैं।[8]

सीएए, एनपीआर, एनआरसी : केंद्र–राज्य महा टकराव के बीज

देश भर में विरोध–प्रदर्शनों का कारण बने नागरिकता संशोधन कानून (सीएए), 2019, एनपीआर और एनआरसी केंद्र–राज्य टकराव की जननी बनने जा रहा है। केरल और पंजाब विधानसभा सीएए के खिलाफ प्रस्ताव पारित चुकी है। राजस्थान की अशोक गहलोत सरकार 24 जनवरी से शुरू होने वाले बजट सत्र में सीएए के खिलाफ प्रस्ताव लाएगी। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी भी विधानसभा में प्रस्ताव लाने जा रही हैं। उन्होंने गैर–भाजपाशासित और पूर्वोत्तर के सभी राज्यों से सीएए के खिलाफ प्रस्ताव पारित करने का आग्रह किया है। केरल सीएए के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में पहुंच गया है और पंजाब की भी यही तैयारी है। दोनों राज्यों ने एनपीआर–एनआरसी को लागू करने से भी मना कर दिया है। केरल ने 14 जनवरी को केंद्र–राज्य संबंधों वाले अनुच्छेद 131 के तहत याचिका दायर की है। वैसे भी, सुप्रीम कोर्ट में सीएए के खिलाफ 60 से अधिक याचिकाओं की सुनवाई 22 जनवरी से हो रही है। इस बीच सरकार ने 10 जनवरी 2020 को सीएए की अधिसूचना जारी कर दी। लेकिन सवाल है कि राज्य लागू करने से इनकार करते हैं तो क्या होगा? सुप्रीम कोर्ट के जाने–माने वकील प्रशांत भूषण ने आउटलुक से कहा, "सीएए के खिलाफ याचिका दायर करने से कोई संवैधानिक संकट उत्पन्न नहीं होगा, क्योंकि जिस तरह नागरिकों के अधिकार होते हैं उसी तरह राज्यों के भी अधिकार होते हैं। संकट तब होगा जब राज्य एनपीआर या एनआरसी लागू करने से मना करेंगे। तब केंद्र सुप्रीम कोर्ट से निर्देश देने की मांग कर सकता है। अगर तब भी राज्यों ने इस पर अमल नहीं किया तो कोर्ट इसे अवमानना मान कर कार्रवाई कर सकता है। केंद्र सरकार भी राज्य की सरकार को बर्खास्त कर सकती है। हालांकि यह आसान नहीं होगा क्योंकि तब राज्य में छह महीने के भीतर चुनाव कराने होंगे।"

मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ने कहा, "पंजाब में 2021 की जनगणना पुराने मानकों के आधार पर होगी, केंद्र सरकार ने एनपीआर के लिए जो नए मानक जोड़े हैं उन्हें लागू नहीं किया जाएगा। जर्मनी में 1930 में हिटलर के समय जो हुआ था अब वह भारत में हो रहा है।

जर्मनीवासियों ने तब इसका विरोध नहीं किया, जिसका उन्हें बाद में पछतावा हुआ, लेकिन हम अभी इसका विरोध करेंगे ताकि हमें बाद में न पछताना पड़े।" पंजाब विधानसभा में मुख्य विपक्षी दल आम आदमी पार्टी ने तो प्रस्ताव का समर्थन किया। लेकिन सबसे विचित्र स्थिति एनडीए के घटक शिरोमणि अकाली दल की है। उसने प्रस्ताव का तो विरोध किया, लेकिन यह भी कहा कि वह पूरे देश में एनआरसी लागू करने के खिलाफ है। दल ने नागरिकता कानून में मुसलमानों को भी शामिल करने की मांग की।

इस बीच, भाजपा ने सीएए के बारे में बताने के लिए तीन करोड़ परिवारों के घर–घर जाने का अभियान शुरू किया है। इसके लिए राज्यसभा सांसद अनिल जैन की अध्यक्षता में छह सदस्यों की समिति बनाई गई है। इसके अलावा करीब एक हजार रैलियां भी की जाएंगी। पार्टी के नेता अब जगह देखकर बयान देने लगे हैं। बिहार में एक जनसभा में केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने सीएए पर तो लोगों से समर्थन मांगा, लेकिन एनआरसी का जिक्र नहीं किया। राज्य के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार एनआरसी के खिलाफ हैं। सीएए के खिलाफ आंदोलन में सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुंचाने वालों से 'बदला लेने' की बात कहने वाले उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ अब कह रहे हैं कि महिलाओं को आगे रखकर नागरिकता कानून के बारे में झूठ फैलाया जा रहा है। लेकिन पश्चिम बंगाल में अगले साल शुरू में विधानसभा चुनाव होने हैं, इसे देखते हुए वहां इस मुद्दे पर भाजपा का आक्रामक रुख बना हुआ है। प्रदेश भाजपा प्रमुख दिलीप घोष ने बयान दिया कि सरकार पूरे देश में एनआरसी लागू करने के लिए प्रतिबद्ध है और राज्य में अवैध रूप से रह रहे 50 लाख बांग्लादेशी मुसलमानों को वापस भेजा जाएगा। इससे पहले घोष कह चुके हैं कि "भाजपा–शासित राज्यों में सीएए विरोधियों को कुत्तों की तरह मारा गया।"

उधर, टकराव को नई धार देते हुए केरल कैबिनेट ने 20 जनवरी को प्रस्ताव पारित कर दिया कि राज्य सरकार एनपीआर अपडेट करने में केंद्र का सहयोग नहीं करेगी। एनपीआर पर 1 अप्रैल 2020 से काम शुरू होना है जो 30 सितंबर तक चलेगा। केंद्र सरकार ने 2021 की जनगणना और राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (एनपीआर) पर 17 जनवरी को बैठक भी बुलाई थी। इसमें कई राज्यों ने माता–पिता के जन्म की तारीख और जन्म स्थान से जुड़े सवाल पर आपत्ति जताई। बैठक में पश्चिम बंगाल ने हिस्सा नहीं लिया।

इस बीच, सरकार ने पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर 73 जिलों में 30 लाख लोगों से एनपीआर के लिए जानकारियां मांगी थीं। लोग पैन की जानकारी देने में झिझक रहे थे, इसलिए उसे हटाने का फैसला किया गया है। इसकी जगह मातृ भाषा का कॉलम जोड़ा जा सकता है। गृह मंत्रालय के अधिकारियों का यह भी कहना है कि ड्राइविंग लाइसेंस, वोटर कार्ड और आधार नंबर जैसी जानकारियां देना लोगों की इच्छा पर निर्भर करेगा। 2010 में पहला एनपीआर हुआ था तो उसमें 14 तरह की जानकारियां मांगी गई थीं। नए एनपीआर में माता–पिता के जन्म स्थान और जन्म तिथि के अलावा पिछला निवास, आधार (वैकल्पिक), वोटर कार्ड, मोबाइल और ड्राइविंग लाइसेंस नंबर जोड़े गए हैं।[9]

नागरिकता कानून राज्यों में लागू करना : संविधान के नजर में

नागरिकता संशोधन बिल पर राष्ट्रपति की मुहर लगते ही ये कानून बन चुका है। अब इस कानून को नोटिफाई कर पूरे देश में लागू किया जाएगा। लेकिन कानून बन जाने के बाद भी सिटीजनशिप एक्ट का विरोध कम नहीं हो रहा है। नॉर्थ ईस्ट राज्यों में इस एक्ट के विरोध में हिंसक विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं। असम में स्थितियां बेकाबू हो गई हैं। दूसरे राज्यों में भी विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं। खासकर गैरबीजेपी शासित राज्य नए नागरिकता कानून का जोरदार विरोध कर रहे हैं। पश्चिम बंगाल, केरल और पंजाब के मुख्यमंत्रियों ने कहा है कि वो अपने यहां नागरिकता संशोधन कानून को लागू नहीं होने देंगे। मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ की सरकारों ने भी अपने यहां नया नागरिकता कानून नहीं लागू करने की बात कही है। इन्होंने आधिकारिक ऐलान तो नहीं किया है लेकिन कहा गया है कि वो कांग्रेस के शीर्ष नेतृत्व के स्टैंड के मुताबिक ही एक्ट का विरोध करेंगे। इसी तरह से महाराष्ट्र में शिवसेना नेता संजय राउत ने कहा है नया एक्ट संविधान का उल्लंघन करता है। उनका कहना है कि राज्य में इसे लागू करने या न करने का फैसला मुख्यमंत्री उद्धव ठाकरे लेंगे, जबकि महाराष्ट्र में सरकार में साझीदार कांग्रेस पार्टी के नेताओं का कहना है कि वो राज्य में नया नागरिकता कानून लागू नहीं होने देंगे।

पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने बिल के पास होने से पहले ही इसका विरोध किया था। बनर्जी ने शुक्रवार को भी कहा कि वो राज्य में इसे लागू नहीं होने देंगी। ममता बनर्जी नए कानून के खिलाफ 16 दिसंबर को कोलकाता में बड़ी रैली करने वाली हैं। केरल के मुख्यमंत्री पिनराई विजयन ने कहा कि नया कानून असंवैधानिक है। ये धर्म के आधार पर भेदभाव फैलाने वाला है, जिसकी इजाजत संविधान कतई नहीं देता। पंजाब के मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ने कहा है कि पंजाब विधानसभा नए कानून को राज्य में लागू करने से रोक देगी। ये संविधान के खिलाफ है। गैरशासित बीजेपी के मुख्यमंत्रियों के ये बयान भ्रामक हैं। मुख्यमंत्री सिटीजनशिप एक्ट का राजनीतिक विरोध कर सकते हैं लेकिन उनके पास इतना अधिकार नहीं है कि वो राज्य में इसे लागू करने से रोक सकें। हकीकत ये है कि कोई भी राज्य केंद्र के बनाए कानून को अपने यहां लागू होने से नहीं रोक सकता। गृहमंत्रालय की तरफ से भी कहा गया है कि कोई भी राज्य अपने यहां केंद्र के बनाए कानून (जो केंद्र की लिस्ट में आते हैं) को अपने यहां लागू करने से नहीं रोक सकते हैं। इस बारे में संविधान की सातवीं अनुसूची में व्यवस्था दी गई है। दरअसल संविधान की सातवीं अनुसूची में केंद्र और राज्यों की ताकत का बंटवारा किया गया है। भारत के संघीय ढांचे में राज्यों के पास भी अधिकार हैं, लेकिन केंद्रीय लिस्ट वाले अधिकार में वो दखल नहीं दे सकते।

संविधान ने अलग–अलग विषयों पर केंद्र और राज्यों को अधिकार सौंपे हैं। इसमें केंद्रीय लिस्ट में ऐसे

100 विषय हैं, जिनपर कानून बनाने का अधिकार केंद्र सरकार को दिया गया है। इसी तरह से राज्यों की लिस्ट में ऐसे 52 विषय हैं, जिसपर कानून बनाने का अधिकार राज्यों को दिया गया है। इसी तरह से कुछ विषय समवर्ती सूची में रखे गए हैं। जिनपर कानून बनाने का अधिकार केंद्र और राज्य दोनों के पास है।

नागरिकता का विषय केंद्र के अंतर्गत आता है, इसलिए इसपर कानून बनाने का अधिकार केंद्र सरकार के पास है। नागरिकता पर बनाए केंद्र सरकार के कानून को राज्य अपने यहां लागू करने से मना नहीं कर सकते। नागरिकता के कानून देश के सभी हिस्सों में एकसमान रूप से लागू होंगे। रक्षा नीति, विदेश नीति, संचार नीति और रेलवे जैसे विषयों के साथ नागरिकता एक ऐसा विषय है, जिसपर कानून बनाने का अधिकार सिर्फ केंद्र के पास है। राज्य केंद्र के बनाए कानून को मानने को बाध्य होंगे। राज्य सरकार शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे मामलों पर अपने कानून बना सकती है और उसे अपना यहां लागू करवा सकती है। इस तरह से करीब 52 विषयों पर वो कानून बनाकर लागू करवा सकती है। राज्यों को क्षेत्रीय हितों का ख्याल रखने वाले विषयों पर कानून बनाने के अधिकार मिले हुए हैं। इसी तरह से समवर्ती सूची में शामिल विषयों पर केंद्र और राज्य दोनों कानून बना सकते हैं। हालांकि केंद्र के बनाया कानून राज्य के बनाए कानून से ज्यादा प्रभावी होगा। क्रिमिनल लॉ और फैमिली प्लानिंग जैसे मामले समवर्ती सूची में रखे गए हैं। इस पर कानून बनाने का अधिकार केंद्र और राज्य दोनों को है।[10]

शिवसेना का उदय ही हिंदुत्ववादी विचारधारा के मुद्दे पर हुआ है। ऐसे में सिर्फ सत्ता पाने के लिए कांग्रेस, एनसीपी जैसी विपरीत विचारधारा वाली पार्टियों से गठबंधन करके लंबे समय तक सरकार चला पाना शिवसेना के लिए मुश्किल ही होगा। शिवसेना के सुप्रीमो रहे स्वर्गीय बालासाहेब ठाकरे अपने हिंदुवादी एजेंडे के चलते ही महाराष्ट्र में शिवसेना का प्रभाव कायम करने में सफल रहे थे। 1995 से 1999 के कार्यकाल में बालासाहेब अपनी हिन्दुवादी छवि के बल पर ही महाराष्ट्र की सत्ता हासिल करने में सफल रहे थे। उस दौरान शिवसेना नेता मनोहर जोशी और नारायण राणे मुख्यमंत्री बने थे। कभी सत्ता के लिये विभिन्न राजनीतिक दलों के नेता शिवसेना प्रमुख के आवास मातोश्री पर माथा टेका करते थे। मगर आज सत्ता के लिये शिवसेना के कार्यकारी अध्यक्ष उद्धव ठाकरे का कांग्रेस, एनसीपी जैसी धुर विरोधी विचारधारा वाली पार्टियों के नेताओं के यहां चक्कर लगाना महाराष्ट्र के लोगों को नहीं भा रहा है। हाल ही में संपन्न विधानसभा चुनावों में शिवसेना के 56 विधायक जिताने वाले विधानसभा क्षेत्रों के मतदाता भी शिवसेना नेताओं की गतिविधियों को देखकर खुद को ठगा हुआ महसूस कर रहे हैं। महाराष्ट्र के लोगों का मानना है कि उन्होंने भाजपा शिवसेना गठबंधन को वोट दिए थे ना कि शिवसेना–कांग्रेस–एनसीपी के गठबंधन को।

कांग्रेस–एनसीपी गठबंधन को तो महाराष्ट्र की जनता ने चुनाव में सिरे से खारिज कर दिया था। प्रदेश की जनता द्वारा हालिया विधानसभा चुनाव में ठुकराये गये दलों का शिवसेना के साथ गठबंधन कर पिछले दरवाजे से सरकार बनाना महाराष्ट्र के मतदाताओं को अच्छा नहीं लग रहा है। महाराष्ट्र के लोगों का मानना है कि कांग्रेस–एनसीपी जैसे दलों के साथ जाकर उद्धव ठाकरे ने अपनी आगे की राजनीतिक साख खराब कर ली है। कांग्रेस एनसीपी के साथ जाने से शिवसेना के कट्टर हिंदुवादी समर्थक भी भाजपा की तरफ खिसकने लगेंगे। ऐसे में आगे चलकर शिवसेना को राजनीतिक दृष्टि से बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा जिसका शायद ठाकरे को अभी अहसास नहीं है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः सत्तर के दशक के पश्चात् भारत में एक राजनीतिक पार्टी का वर्चस्व धीरे–धीरे कम होते गया और बहुदलीय व्यवस्था मजबूत होकर उभरने लगी और गठबन्धन सरकारें बनने लगी। पिछले दशकों में केन्द्र तथा राज्यों में अधिकांश गठबंधन सरकारों ने शासन की बागडोर संभाल रखी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *बाल एलेन, आधुनिक राजनीति और षासन, द मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 2008, पृ. 85*
2. *1977 के बाद बनी 138 राज्य सरकारों में 40 गठबंधन किए, औसत कार्यकाल 26 महीने से भी कम रहा, दैनिक भास्कर, 3 नवम्बर, 2019*
3. *ऐसे बदल गया देश का राजनीतिक नक्शा, केंद्र में मजबूत लेकिन राज्यों में कमजोर हुई भाजपा, आज तक, 19 दिसम्बर, 2019*
4. *नज्मी, शादाब आलेख ''21 से 17 बीजेपी की पकड़ से फिसल रहे हैं राज्य'', बीबीसी न्यूज, 28 नवंबर, 2019*
5. *झारखंड भी भाजपा के हाथ से फिसला, महागठबंधन को 47, भाजपा को 25 सीटों पर जीत, अमर उजाला, 24 दिसम्बर, 2019*
6. *दिल्ली में फिर केजरीवाल, भजपा को झटका, कांग्रेस फिर नदारद, एनडीटीवी, 11 फरवरी, 2020*
7. *दिल्ली चुनाव में आप की जोरदार जीत : केजरीवाल जनता की नब्ज पहचानने में अधिक कामयाब रहे, जागरण, 16 फरवरी, 2020*
8. *रावत, जयसिंह आलेख ''दिल्ली की हार का असर होगा भाजपा शासित राज्यों के मुख्यमंत्रियों पर'', अमर उजाला, 11 फरवरी, 2020*
9. *सिंह, एस.के. आलेख ''सीएए, एनपीआर, एनआरसी :केंद्र–राज्य महा टकराव के बीज'', आउटलुक, 23 जनवरी, 2020*
10. *आनन्द, विवेक आलेख ''नागरिकता कानून लागू करने से क्या मना सकता है कोई राज्य? जानें क्या कहता है संविधान'', न्यूज 18, 14 जनवरी, 2019*